व्यावसायिक बैंको का प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के प्रबन्धन की बुनियादी व्यवस्था (जनपद कानपुर देहात के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ0 शरद कक्कड़*

सन् 1969 से पूर्व वाणिज्य बैंकों पर चन्द पूॅजीपतियों तथा उद्योगपतियों का स्वामित्व बना हुआ था। पूॅजीपति कई बैकों के निदेषक मंडल में शामिल होते थे एवं वे बैंकों के साधनों का प्रयोग अपने व्यक्तिगत हितों के संवर्धन के लिए करते थे। बैंको के कार्यालय अधिक जनसंख्या वाले स्थानों पर केन्द्रित थें जिसकी वजह से ग्रामीण क्षेत्र पूर्णयता उपेक्षित रहे। निजी स्वामित्व वाले बैंकों के साधनों का उपयोग एवं व्यापार की आवष्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जा रहा था, जिसका अनुमान इस बात से लगता है कि वर्ष 1951 में उद्योग एवं व्यापार को वाणिज्य बैंको के ऋण का 70 प्रतिषत भाग प्राप्त होता था, जो 1968 में बढ़कर 86.7 प्रतिषत हो गया था।

वर्ष 1969 में 14 बैंकों के राष्ट्रीयकरण के पूर्व भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रमुख अंग कृषि, लघु व्यवसाय के वित्त की कोई ठोस व्यवस्था नही थी, ऐसी दषा में भारतीय अर्थव्यवस्था के नियोजित आर्थिक विकास की आवष्यकताओं को ध्यान में रखकर ही बैकिग क्रियाओं के नियमन के लिए बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया।

जुलाई 1969 में भारत सरकार द्वारा 14 बैंकों का राष्ट्रीयकरण प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र की वित्त व्यवस्था के सन्दर्भ में एक ऐतिहासिक कदम तो था ही, बल्कि देष के आर्थिक विकास के लिए एक स्वर्णिम युग का सूत्रपात भी था। भारत में प्रमुख व्यापारिक बैंकों के राष्ट्रीयकरण करने का मुख्य उद्देष्य बैंकिंग व्यवसाय में दूरगामी प्रभाव वाले सुधार लाना था। राष्ट्रीयकरण के परिणाम स्वरूप भारतीय बैकिंग में नई दिषाएं खुली तथा उनका आधार विस्तृत हुआ। राष्ट्रीयकरण से सबसे महत्वपूर्ण सुधार ऋण देने की नीतियों तथा व्यवहारों में हुआ। ऋण देने की नीतियों तथा व्यवहारों को इस तरह ढाला गया ताकि अर्थव्यवस्था के अब तक उपेक्षित रहे क्षेत्रों की आवष्यकताएं पूरी हो सकें। सामाजिक नियन्त्रण के प्रयोग को करने से पहले बैंको ने कृषि तथा लघु उद्योगों को ऋण सुविधाएं प्रदान करने की तरफ थोड़ा भी ध्यान नही दिया था। स्वनियोजित वर्ग की विषाल जनसंख्या में आने वाले छोटे–छोटे उधारकर्ता को बैंकिग प्रणाली में बिल्कुल सुविधाएं नही मिल पायी थी, लेकिन बैंकों द्वारा वित व्यवस्था में काफी गति आयी, और इस हेतु कई विषेष ऋण योजनाएं आरम्भ की गयी। भारतीय बैकों के समूचे दृष्टिकोण में परिवर्तन आया और परम्परागत बैंकिग व्यवस्था ने एक रचनात्मक रूप लिया। अर्थव्यवस्था के प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों के सम्बन्ध में बैंकों द्वारा ऋण देने के व्यवहारों में हुए परिवर्तन संस्थागत गारन्टी प्रणाली के परिणाम थे।

प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के अंगों का वर्गीकरण भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी किये गये अग्रिमों के सम्बन्ध में विभिन्न दिषा–निर्देषों के आधार पर किया गया है। प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के विभिन्न अंग जैसे – कृषि, लघु उद्योग, लघु सड़क तथा जल परिवहन, खुदरा व्यापार, छोटे व्यावसायिक कार्य तथा स्वनियोजित व्यक्ति, अनुसूचित जातियों तथा जन जातियों के लिए राज्य प्रायोजित निकाय, षिक्षा, आवास, उपभोक्ता ऋण, जैविक गैस संयन्त्र, विपणन स्थल आदि है।

प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों की वित्त व्यवस्था :

भारत में प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के लिए वित्त के स्रोत गांवो और शहरों में सामान्यता एक ही है। इनमें रुपया उधार देने वाले साहूकार तथा शहरी क्षेत्र में देषी बैंकर और कुछ सीमा तक संयुक्त पूंजी कम्पनियॉ एवं वाणिज्य बैंक भी शामिल हैं। भारतीय किसान, लघु उद्योगपति, लघु व्यावसायी तथा कमजोर वर्ग के व्यक्ति अपनी अल्पावधि और मध्यावधि वित्तीय आवष्यकताओं की पूर्ति के लिए छोटे साहूकारों, सहकारी ऋण समितियों और सरकार से रुपया उधार लेते है। दीर्घावधि आवष्यकताओं को पूरा करने के लिए यह बड़े साहूकारों, भूमि विकास बैकों, वाणिज्य बैकों, विषिष्ट वित्तीय संस्थाओं और सरकार से रुपया उधार लेते है। भारत में प्राथमिक साख व्यवस्था के निम्नलिखित दो अंग है –

* **प्रवक्ता (वाणिज्य विभाग), भास्करानन्द इण्टर कालेज, नर्वल, कानपुर नगर (उ0प्र0)**

(1) प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों की वित्त व्यवस्था के गैर संस्थागत स्रोत

इसके अन्तर्गत निम्न को शामिल कर सकते हैं –

(1) साहूकार : भारत में दो प्रकार के साहूकार हैं। एक वे जो खेती और साहूकारी दोनों ही कार्य करते हैं इन्हे कृषि साहूकार कहते हैं। यह मूलतः खेती करते हैं किन्तु सहायक व्यवसाय के रूप में रुपया उधार देने का कार्य भी करते हैं। इसी प्रकार गॉव का दुकानदार भी साहूकारी कर लेता है। इसके अलावा दूसरे प्रकार के साहूकार वे होते हैं जिनका मुख्य व्यवसाय रुपया उधार देना ही होता है।

किसान आदि को नकद रुपये की आवष्यकता के लिए साहूकार पर निर्भर रहना पड़ता है। पिछले वर्षों से किसान को नकद धन देने वाले साधन के रूप में साहूकार का महत्व तेजी से कम होता जा रहा है। अखिल भारतीय ग्राम सर्वेक्षण (1954) की जॉच के अनुसार सम्पूर्ण ग्राम ऋण में साहूकारों द्वारा दिये ऋण का भाग लगभग 70 प्रतिषत था किन्तु 1975–76 में किये एक अन्य सर्वेक्षण के अनुसार साहूकारों के ऋण का अंष केवल 43 प्रतिषत है जो 2001 तक घटकर केवल 15.2 प्रतिषत रह गया। इससे स्पष्ट हो जाता है कि संस्थानात्मक अभिकरणों के मुकाबले साहूकार पिछड़ते जा रहे हैं।

(2) व्यापारी एवं आढ़ती : व्यापारी एवं आढ़ती एजेन्ट किसानों को फसल के पकने से पूर्व उत्पादन उद्देष्यों के लिए ऋण उपलब्ध करातें हैं। यह किसानों को मजबूर करते हैं कि वे फसल को कम कीमतों पर बेंचे और वे अपने लिए ऊँची आढ़त वसूल करते हैं। वित्त का यह स्रोत, नकद फसलों अर्थात रूई, मूँगफली, तम्बाकू आदि या फलों के बगीचों, आमों आदि के लिए विषेष रूप से महत्वपूर्ण है।

(3) सम्बन्धी : किसान लघु उद्योगी, लघु व्यवसायी या कमजोर वर्ग के व्यक्ति अपने सम्बन्धियों से नकद या वस्तुओं के रूप में उधार प्राप्त करते हैं। ताकि वे अस्थायी कठिनाइयों को दूर कर सकें। यह ऋण सामान्यतः अनौपचारिक रूप के लिए दिये जाते है। इन पर ब्याज या तो लिया ही नही जाता या ब्याज की दर बहुत नीची होती है। यह स्रोत अनिष्चित है और आधुनिक समय की बढ़ती हुई आवष्यकताओं के कारण इस स्रोत पर अधिक निर्भर नही रहा जा सकता।

(4) भू–स्वामी : किसान विषेषकर सीमान्त किसान एवं काष्तकार तथा प्राथमिकता वर्ग के अन्य व्यक्ति आवष्यकताओं के लिए भू स्वामी पर निर्भर करते हैं। इस वित्त स्रोत में वे सभी दोष विद्यमान है जो महाजनों, व्यापारियों या आढ़तियों द्वारा उपलब्य कराये गये वित्त में पाये जाते हैं। प्रायः इस वित्त के माध्यम से छोटे किसानों से उनकी भूमि छल द्वारा उनसे छीन ली जाती है तथा भूमिहीन श्रमिकों को बंधुआ श्रमिक बनने को मजबूर किया जाता है।

प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों की वित्त व्यवस्था के संस्थानात्मक स्रोत

स्वतन्त्रता के पश्चात यह अनुभव किया गया कि ग्रामीण एवं अन्य प्राथमिक वर्ग के विकास की सबसे प्रमुख समस्या पर्याप्त वित्त की प्रकृति एवं समस्या के स्वरूप के अध्ययन हेतु अखिल भारतीय साख सर्वेक्षण समिति नियुक्त की गयी थी। इस समिति के अध्यक्ष श्री गोरवाल थे। सन् 1954 में इस समिति ने अपनी रिपोर्ट पेष की थी। समिति का यह विचार था कि ग्रामीण वित्त की पूर्ति में सहकारी समितियों की प्रमुख भूमिका होनी चाहिए। इस सम्बन्ध में भारतीय रिजर्व बैंक को देष के केन्द्रीय बैंक होने के नाते नेतृत्व की भूमिका निभानी चाहिए। इसके अतिरिक्त इस समिति की सिफारिष पर इम्पीरियल बैंक ऑफ इण्डिया को भारत सरकार ने अपने हाथ में लेकर भारतीय स्टेट बैंक की स्थापना की थी। इस बैंक की स्थापना के समय यह निष्चित किया गया कि यह बैंक ग्रामीण वित्त की पूर्ति में मुख्य भूमिका निभायेगा।

रिजर्व बैंक ने 1956 में गोरवाल समिति की सिफारिष के अनुसार ग्रामीण वित्त की पूर्ति हेतु दो विषेष कोषों राष्ट्रीय कृषि साख (दीर्घकालीन कोष) एवं राष्ट्रीय कृषि साख (स्थिरीकरण) कोष की स्थापना की। इन कोषों से राज्य सरकारों और राज्य सहकारी बैकों आदि को उदार शर्तों पर वित्तीय सुविधायें उपलब्ध करायी गयी। योजनाबद्ध आर्थिक विकास के साथ–साथ कृषि का भी विकास हुआ। इसके फलस्वरूप कृषि में वित्त की मांग बढ़ी। ग्रामीण वित्त की जरूरतों के परीक्षण हेतु सन् 1967 में रिजर्व बैंक ने अखिल भारतीय साख निरीक्षण समिति नियुक्त की थी। इस समिति के अध्यक्ष श्री वेंकटैय्या थे। वेंकटैय्या समिति का यह विचार था कि केवल सहकारी साख समितियों के माध्यम से ग्रामीण साख की सभी आवष्यकताओं की पूर्ति सम्भव नही है। यहॉ उल्लेखनीय है कि सन् 1966 से कृषि विकास की नयी

तकनीकि अपनायी गयी। इस तकनीक के अन्तर्गत नये प्रकार की कृषि प्रणाली रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग, श्रेष्ठ बीजों का प्रयोग आदि शुरू हुआ। इसके फलस्वरूप ही कृषि के क्षेत्र में हरित क्रान्ति की घटना हुई। हरित क्रान्ति के फलस्वरूप ग्रामीण वित्त की प्रकृति एवं विषेष रूप से कृषि वित्त की जरूरतों का विस्तार हुआ। इस समिति ने अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला था कि सन् 1952 से सन् 1961 के बीच ग्रामीण वित्त के क्षेत्रों में गैर संस्थागत स्रोतों का महत्व कम नहीं हुआ है। इस कारण समिति ने यह सिफारिष की थी कि ग्रामीण वित्त की पूर्ति की प्रणाली में परिवर्तन किया जाना चाहिए। यहॉ उल्लेखनीय है कि सन् 1969 में 14 बड़े व्यापारिक बैकों का राष्ट्रीयकरण भी कर दिया गया था। उस समय यह तर्क दिया गया था सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक कृषि एवं ग्रामीण वित्त के विभिन्न वर्गों की वित्त जरूरतों को पूरा करने के लिए व्यापक स्तर पर कार्य करेगें। राष्ट्रीय कृषि आयोग ने भी अखिल भारतीय ग्रामीण साख निरीक्षण समिति के विचारों का समर्थन किया था। वैंकटैय्या समिति एवं राष्ट्रीय कृषि आयोग की सिफारिषों के फलस्वरूप ही यह निर्णय लिया गया कि ग्रामीण वित्त की पूर्ति का उत्तरदायित्व केवल सहकारी संस्थाओं पर ही नहीं होना चाहिये। इसके अतिरिक्त व्यापारिक बैकों को इस दिषा में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिये। ग्रामीण वित्त की पूर्ति में एक से अधिक संस्थाओं की भूमिका की यह शुरूआत थी। इसके पश्चात 1975 में आपातकाल की घोषणा के पश्चात क्षेत्रीय ग्रामीण बैकों की स्थापना की गयी। इन बैकों का मुख्य उद्देष्य ग्रामीण क्षेत्र के कमजोर वर्ग एवं कृषक वर्ग की सभी प्रकार की जरूरतों को पूरा करना था।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको की स्थापना के पश्चात प्राथमिक वर्ग की वित्त की पूर्ति में तीन संस्थायें महत्वपूर्ण हो गयी, पहला सहकारी बैंक, दूसरा सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक एवं तीसरा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक। वर्तमान में यह तीनों वित्त एजेन्सियां ग्रामीण एवं प्राथमिक वित्त की पूर्ति करती है। सन् 1982 में नाबार्ड की स्थापना के पश्चात से ये एजेन्सियां ग्रामीण वित्त के संस्थागत स्रोत के रूप में नाबार्ड के नेतृत्व में ग्रामीण वित्त उपलब्ध करा रही हैं।

स्पष्ट है कि संस्थागत ऋण में ऐसी राषियां शामिल की जाती हैं जो सहकारी समितियों, व्यापारिक बैकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैकों द्वारा उपलब्ध करायी जाती है। राज्य सरकारें, सरकारी बैकों और भूमि विकास बैकों द्वारा वित्तीय सहायता उपलब्ध कराती है। सहकारी क्षेत्र में प्राथमिक कृषि साख समितियों अल्पकालीन एंव मध्यकालीन ऋणों का प्रबन्ध एवं भूमि विकास बैंक दीर्घकालीन ऋणों का प्रबन्धन करते हैं। व्यापारिक बैंक एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अल्पकालीन एवं सावधि ऋणों की व्यवस्था करते हैं। राष्ट्रीय कृषि एवं विकास बैंक, (नाबार्ड) राष्ट्रीय स्तर पर कृषि साख के लिए षिखर संस्थान हैं जो सभी ग्रामीण वित्तीय संस्थाओं के लिए पुनर्वित्त सहायता उपलब्ध कराता है।

भारत में प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र की वित्त व्यवस्था के संस्थागत स्रोत निम्न हैं :

(1) सहकारी बैंक : सहकारी बैंक की कार्य पद्वति का मूल आधार है मिल कर कार्य करना। इन बैकों द्वारा प्रदान किये जाने वाला वित्त सहकारी साख कहलाता है। भारत में सहकारी वित्त प्रबन्ध व्यवस्था को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम वे बैंक जो लघु एवं मध्यकालीन वित्त प्रदान करते हैं एवं द्वितीय वे जो दीर्घकालीन वित्त प्रदान करते हैं अल्पकालीन वित्त का प्रबन्ध तीन स्तरों पर होता है–

प्रथम : ग्रामीण स्तर पर वित्त प्रबन्ध के लिए प्राथमिक सहकारी समितियों का गठन किया जाता है।
द्वितीय : जिला स्तर पर केन्द्रीय सहकारी बैंकों द्वारा वित्त का प्रबन्ध किया जाता है।
तृतीय : राज्य स्तर पर वित्त प्रदान करने का कार्य राज्य सहकारी बैंक करते हैं।

इन तीनो स्तरों के बैंक एक दूसरे से जुड़े होते हैं। प्राथमिक समितियां केन्द्रीय सहकारी बैंको से अपने वित्तीय साधन प्राप्त करती है। इसी प्रकार केन्द्रीय बैंक अपने अंषों तथा ऋण पत्रों के अतिरिक्त राज्य सहकारी बैकों से पूंजी प्राप्त करते हैं। राज्य सहकारी अथवा शीर्ष बैंक सरकार एवं रिजर्व बैंक से पॅूजी एकत्रित करते हैं।

प्राथमिक सहकारी समितियां : भारत में प्राथमिक कृषि समितियों की स्थापना 1904 में सहकारी समिति अधिनियम के लागू होने के बाद हुई। इन साख समितियों की स्थापना का प्रमुख उद्देष्य कृषकों को परम्परागत ऋणों के भार से मुक्त कराना तथा मितव्ययिता को प्रोत्साहित करना था। प्राथमिक कृषि

समितियॉ ग्रामीण स्तर पर कार्य करती हैं तथा कृषकों से सीधा सम्बन्ध बनाये रखती है। इन समितियों की स्थापना किसी एक गांव अथवा कुछ गांवो को मिलाकर की जाती है। कम से कम दस वयस्क व्यक्ति मिलकर प्राथमिक समिति की स्थापना कर सकते हैं। इन समितियों को सहकारी समितियों को रजिस्ट्रार के यहॉ पंजीकृत किया जाता है। इन समितियों का दायित्व प्रारम्भ में असीमित था। परन्तु बाद में असीमित दायित्व वाली समितियों को सीमित दायित्व वाली समितियों में परिवर्तत करके सदस्यों के दायित्व को सीमित कर दिया गया। समितियों के कार्यों के मूल्यांकन एवं प्रबन्ध संचालन का दायित्व सदस्यों की साधारण सभा द्वारा होता है। वर्ष में एक बार साधारण सभा की एक बैठक अवष्य होती है। परन्तु दैनिक कार्यों के प्रबन्ध हेतु साधारण सभा द्वारा एक 'प्रबन्ध समिति' का गठन किया जाता है। जिसमें 5 से 9 सदस्य होते हैं। यह सदस्य अपने अध्यक्ष एवं सचिव का चुनाव करते हैं।

केन्द्रीय सहकारी बैंक : भारत में केन्द्रीय सहकारी बैकों की स्थापना सन् 1912 के सहकारी अधिनियम के अन्तर्गत हुई थी। ये बैंक जिला स्तर पर कार्य करते हैं तथा प्राथमिक कृषि साख समितियों को वित्तीय साधन उपलब्ध कराते हैं। केन्द्रीय सहकारी बैकों का सहकारी वित्त प्रणाली में महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि ये प्राथमिक कृषि साख समितियों एवं शीर्ष बैकों के मध्य कड़ी का कार्य करते हैं। भारत में बैको को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है–

प्रथम सहकारी बैंक (यूनियन) जिनकी सदस्यता केवल सहकारी समितियों को ही प्राप्त होती है और द्वितीय केन्द्रीय सहकारी बैंक जिनके सदस्य समितियां एवं व्यक्ति दोनों ही बन सकते हैं।

केन्द्रीय सहकारी बैकों के प्रमुख कार्य निम्न हैं–

1. केन्द्रीय सहकारी बैंक प्राथमिक सदस्य समितियों की उत्पादन, विपणन एवं आपूर्ति आदि के लिए वित्त उपलब्ध कराते है।
2. ये बैंक प्राथमिक सदस्यों को उनके संसाधनों के उचित विनियोग के लिए दिषा निर्देष देते हैं।
3. केन्द्रीय सहकारी बैंक गैर वित्त गतिविधियों जैसे बीज, खाद सामग्री आदि की आपूर्ति में भी हिस्सा लेते है।
4. ये बैंक साधारण बैंकिग का कार्य करते हैं जैसे– जनता से जमा स्वीकार करना, बिल, हुण्डी, चेक आदि में व्यवहार, सदस्यों को ऋण प्रदान करना आदि।
5. ये बैंक प्राथमिक सदस्यों के बीच सन्तुलन का कार्य भी करते है। ये बैंक उन समितियों को जिनमें कोष की कमी होती है उन्हें दूसरी समितियों से कोष उपलब्ध कराती हैं।
6. ये बैंक प्राथमिक समितियों के निरन्तर सम्पर्क में रहते हैं एवं उन्हें नेतृत्व प्रदान करते है।
7. इन बैकों के सदस्य व्यक्ति एवं समितियां साख समितियों के अतिरिक्त विपणन समितियॉ, कृषि समितियां, शहरी सहकारी साख समितियां आदि भी इन बैकों के सदस्य बन सकते हैं।

केन्द्रीय सहकारी बैंक के सम्बन्ध में संचालन हेतु 'संचालक मण्डल' का गठन किया जाता है। जिनमें 12 से 15 सदस्य होते हैं इस मण्डल का प्रमुख कार्य नीति निर्धारण करना होता है।

केन्द्रीय सहकारी बैकों द्वारा प्राथमिक समितियों को अल्पकालीन एवं मध्यकालीन ऋण प्रदान किये जाते हैं। 30 जून 1991 को इस प्रकार के बैकों की संख्या 363 थी।

राज्य सहकारी बैंक : राज्य सहकारी बैंक सहकारी बैंकिंग ढांचे की शीर्ष संस्था है। प्रत्येक राज्य में एक राज्य सहकारी बैंक स्थापित किया गया है। 30 जून 1997 को इस प्रकार के 28 बैंक थे जिनके द्वारा 11,572 करोड़ रूपये के ऋण प्रदान किये गये थे। इन बैकों द्वारा केन्द्रीय सहकारी बैंकों को वित्तीय सुविधायें प्रदान की जाती हैं। इन बैकों के मुख्य वित्तीय स्रोत अंष पूॅजी, सदस्यों में उपलब्ध जमायें, संचित कोष आदि हैं। अन्य सहकारी बैकों की तरह इनकी भी प्रबन्ध व्यवस्था 'सचालक मण्डल' द्वारा होती है। इस मण्डल में राज्य सरकार के प्रतिनिधि एवं विषेषज्ञ मनोनीत किये जाते है।

केन्द्रीय सहकारी बैकों के माध्यम से राज्य सहकारी बैंक, प्राथमिक साख समितियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराते हैं। राज्य स्तर के यह शीर्ष बैंक अल्पकालीन एवं मध्यकालीन ऋण प्रदान करते हैं एवं ऋणो के विरूद्ध सरकारी प्रतिभूतियां, कृषि सम्बन्धी विनिमय बिल आदि स्वीकार किये जाते हैं। इनका प्रमुख कार्य अपने राज्य से सम्बन्धित कृषि की वित्तीय जरूरतों को पूरा करना है। कृषि की मौसमी जरूरतों तथा फसलों के विपणन के लिए ये बैंक ऋण प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त कृषि

सम्बन्धी औजारों को खरीदने भूमि सुधार तथा सिंचाई सुविधाओं के विस्तार हेतु भी इन बैंकों को ऋण उपलब्ध होता है।

भूमि विकास बैंक : भारत में दीर्घकालीन कृषि वित्त प्रदान करने के लिए इस प्रकार के बैंकों की स्थापना की गई है। यह बैक कृषक की भूमि गिरवी रखकर ऋण सुविधाएं प्रदान करते हैं। इनके ऋणों को मुख्य उद्देष्य कृषकों को भूमि सुधार हेतु सिंचाई साधन स्रोतों सुविधाओं के विस्तार के लिए वित्त प्रदान करना है। प्रथम विष्व युद्ध के पश्चात सन् 1920 में प्रथम भूमि विकास बैंक की स्थापना की गयी थी। परन्तु बैंकों का विधिवत् विकास स्वतन्त्रा के पश्चात शुरू हुआ। 1950–51 में केन्द्रीय भूमि विकास बैकों की संख्या 5 तथा प्राथमिक भूमि विकास बैंको की संख्या 296 थी जबकि 30 जून 1995 को यह संख्या बढ़ कर 20 केन्द्रीय भूमि विकास बैंक तथा 717 प्राथमिक भूमि विकास बैंक हो गयी।

इन बैंकों की स्थापना दो स्तरों पर की गयी– प्रथम–राज्य स्तर पर एवं द्वितीय जिला स्तर पर प्राथमिक भूमि विकास बैंक कार्य करते हैं। भूमि को बन्धक रखकर इन बैंकों द्वारा ऋण सुविधायें प्रदान की जाती है। ऋण प्रदान करने के अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्र की बचतों को एकत्रित करने का भी प्रयत्न इन संस्थाओं द्वारा किया जाता है। भूमि की उर्वरक शक्ति को बनाये रखने के लिये इन बैकों द्वारा तकनीकी सलाह भी प्रदान की जाती है। केन्द्रीय भूमि विकास बैंक जिला स्तर पर स्थापित प्राथमिक भूमि विकास बैंकों को ऋण प्रदान करते है।

इन बैंकों द्वारा उत्पादक एवं अनुत्पादक उद्देष्यों के लिये कृषि भूमि को गिरवी रखकर, ऋण प्रदान किया जाता है। इन बैंकों का कृषि वित्त में विषेष महत्व है। केन्द्रीय भूमि विकास बैंक के सदस्य प्राथमिक भूमि विकास बैंक होते हैं। इनके अतिरिक्त सहकारी समितियॉ एवं व्यक्ति भी इन संस्थाओं के सदस्य हो सकते है। राज्य सरकारें केन्द्रीय भूमि विकास बैंक को पूॅजी प्रदान करती है। ऋणपत्रों के निर्गमन द्वारा भी मुद्रा बाजार से, बैंक वित्तीय साधन एकत्रित कर सकते हैं। प्राथमिक भूमि विकास बैंक अपनी पूॅजी केन्द्रीय भूमि विकास बैंकों से प्राप्त करते हैं। इनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध किसानों से रहता है।

भूमि विकास बैंकों को सुदृढ़ करने के उद्देष्य से रिजर्व बैंक ने सन् 1973 में 'माधवदास समिति' नियुक्त की थी। इस समिति ने सन् 1974 में अपनी सिफारिषें सरकार को प्रस्तुत की थी। इस समिति का सुझाव था कि भूमि विकास बैंको को कुषलतापूर्वक चलाने के लिए प्रषिक्षित कर्मचारी लिये जाने चाहिए। समिति का यह भी सुझाव था कि जिन राज्यों में भूमि विकास बैंकों की स्थित अत्यन्त दयनीय है, वहॉ राज्य सहकारी बैंक ही दीर्घकालीन सुविधाओं को प्रदान करने का उत्तदायित्व ग्रहण करें। समिति का यह भी विचार था कि अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन सहकारी वित्त में समन्वय स्थापित किये जाने की आवष्यकता है। छोटे किसानों को अधिक ऋण सुविधायें भूमि विकास बैंको से प्राप्त हो सके इस दिषा में राज्य सरकारों को विषेष प्रयत्न करना चाहिए। इन सिफारिषों के आधार पर रिजर्व बैंक ने राज्य सरकारों की मदद से भूमि विकास बैंक के ढ़ाचे को सुदृढ़ करने के लिए कदम उठाये एवं इन बैंकों को उदार शर्तों पर ऋण सुविधायें प्रदान की। भूमि विकास बैंक के ऋणों का कृषकों के लिए विषेष महत्व है।

ग्रामीण ऋण में सहकारी ऋणों का विषेष महत्व है। पिछले एक दषक में ग्रामीण क्षेत्र में व्यापारिक बैंकों ने तीब्र गति से शाखाओं की स्थापना की है। इसके अतिरिक्त सन् 1975 में ग्रामीण वित्त की जरूरतों को पूरा करने के लिए क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने भी सुचारू रूप से कार्य करना शुरू किया। परन्तु केवल व्यापारिक बैंक एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक मिलकर ग्रामीण वित्त की पूर्ति की जरूरतों को पूरा नही कर सकते। इस कारण ग्रामीण वित्त की पूर्ति के लिए सहकारी पद्धति के अनुसरण का निर्णय लिया गया।

सहकारी साख संस्थाओं के विकास से साहूकारों एवं महाजनों के कर्जों से कृषकों को मुक्त करने में मदद मिली है। ये संस्थाये न केवल कृषकों वरन् ग्रामीण कारीगरों, ग्रामीण क्षेत्र के कुटीर उद्योगों आदि को भी ऋण सुविधायें प्रदान करती है। स्वतन्त्रता के समय साहूकार, महाजन आदि ग्रामीण ऋणों का 75 प्रतिषत से भी अधिक प्रदान करते थे। सहकारी साख समितियों के विकास से इस स्थित में सुधार हुआ है एवं वर्तमान में सहकारी साख समितियॉ कुल ग्रामीण ऋणों का 40 प्रतिषत प्रदान कर रही है। ये समितियॉ न केवल ऋण सुविधायें प्रदान करती है वरन् कृषकों को अच्छे बीज, रासायनिक उर्वरक, आधुनिक कृषि औजार आदि भी उपलब्ध कराती है। वर्तमान में सहकारी आन्दोलन केवल ऋण

एंव वित्तीय सुविधाओं तक ही सीमित नही है वरन् कृषि वस्तुओं के विपणन एवं भण्डारण में भी ये सक्रिय हैं। इसके फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्र में मध्यस्थ एवं बिचौलियों के शोषण में कमी आयी है।

निष्कर्ष :–

1. जनपद कानपुर देहात में कार्यरत् विभिन्न व्यावसायिक बैंकों में सर्वाधिक प्राथमिक ऋण उपलब्ध कराने वाला बैंक भारतीय स्टेट बैंक है एवं सबसे कम प्राथमिक ऋण इलाहाबाद बैक ने उपलब्ध कराया है।
2. बैंक ऑफ बड़ौदा ने प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को ऋण देने के सन्दर्भ में उदार रूख अपनाया हैं। गत दशक के दौरान प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को ऋण जहॉ वर्ष 1992 में 60.2 % था, वही वर्ष 2002 में बढ़कर 94% हो गया। कृषि क्षेत्र को ऋण का प्रतिशत इस अवधि के दौरान 39.3 प्रतिशत से बढ़कर 75 प्रतिशत हो गया।
3. भारतीय स्टेट बैंक का अध्ययन दशक में ऋण जमा अनुपात जहॉ वर्ष 1992 में 39.2 प्रतिशत था वही वर्ष 2002 में यह मात्र 32 प्रतिशत रह गया, किन्तु इसका कारण कम ऋण प्रदान करना नही, बल्कि कुल जमा राशि का बढ़ना है। बैंक की कुल जमा राशि में दशक के दौरान तीन गुना तथा कुल ऋण राशि में दो गुना वृद्धि हुई है। भारतीय स्टेट बैंक ने कृषि क्षेत्र को ऋण देने में उदारवादी नीति अपनाई है एवं बैक द्वारा कृषि क्षेत्र को ऋण में लगभग तीन गुना वृद्धि हुई है। बैंक ने कमजोर वर्ग को ऋण प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विभेदक ब्याज दर योजना के अन्तर्गत बैंक ने विशेष ध्यान नही दिया है।
4. सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया का ऋण जमा अनुपात अध्ययन दशक के दौरान 32.4 प्रतिशत से घटकर 26 प्रतिशत हो गया। इस बैंक के प्राथमिक क्षेत्र को ऋण के अनुपात में भी गिरावट दर्ज हुई है। कृषि क्षेत्र को भी इस बैंक द्वारा विशेष सहयोग प्राप्त नही हुआ, एवं बैंक ने अध्ययन अवधि के दौरान वर्ष 2002 में मात्र 35प्रतिशत ऋण कृषि क्षेत्र की दिया।
5. जिला सहकारी बैंक ने जनपद कानपुर देहात में अपनी ऋण राशि को सम्पूर्ण रूप से प्राथमिक क्षेत्र को प्रदान किया है, इस बैंक ने प्राथमिक क्षेत्र के अन्तर्गत कृषि को 100 प्रतिशत ऋण प्रदान किया है। कमजोर वर्ग को भी इस बैंक द्वारा आवश्यकतानुसार ऋण उपलब्ध कराया गया है।
6. जनपद के व्यावसायिक बैंकों ने प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को ऋण के सम्बन्ध में उल्लेखनीय प्रयास किया है। अध्ययन दशक के दौरान ऋण का प्रतिशत 75 प्रतिशत से लेकर 93 प्रतिशत के मध्य रहा हैं। व्यावसायिक बैंकों के कृषि ऋण में भी बढ़ोत्तरी दर्ज हुई है।

अन्त में कहा जा सकता है कि सहकारी बैंकों ने ग्रामीण क्षेत्र एवं कृषकों की काफी मदद की है, परन्तु यह भी सत्य है कि सहकारी साख के योगदान में वृद्धि धीमी गति से हुई है और उसका भी अधिकांष लाभ बड़े किसानों ने ही उठाया है, अतः आवष्यकता इस बात की है कि ऐसे प्रयत्न किये जायें जिससे इसका लाभ छोटे किसानों को अधिक मिले।

सन्दर्भ :–

- अजीत सिंह– भारत में ग्रामीण विकास एवं बैंकिग पद्धति
- सेवा क्षेत्र दृष्टिकोण–ऋण योजना बनाना ग्रामीण आयोजन और ऋण विभाग भारतीय रिजर्व बैंक
- प्राथमिकता क्षेत्र को अग्रिम संबन्धी मार्गदर्शी सिद्धांत ग्रामीण आयोजन और ऋण विभाग भारतीय रिजर्व बैंक
- सांख्यिकीय पत्रिका–2002 सांख्यिकीय विभाग जनपद कानपुर देहात
- S.K. Basu -Review of Current Banking Theory and Practice
- Hand book of Statistics on the Indian Economy Reserve Bank of India
- Service Area Credit Plan Bank of Baroda, Kanpur
- www.Reserve Bank of India .in .org.com